REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

''महिला सशक्तिकरण के सम्बन्ध में दयानंद सरस्वती के विचारों की प्रासंगिकता : वर्तमान सन्दर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन''

दीपक चन्द्र[1] , प्रो. हिमांशु बौड़ाई
[1]शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, हे. न. ब. केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल
[2]राजनीति विज्ञान विभाग, हे. न. ब. केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल.

प्रस्तावना :

महर्षि दयानंद सरस्वती उन्नीसवीं सदी के सुप्रसिद्ध समाज सुधारक थे। उन्होंने अपने चिंतन में महिला सशक्तिकरण को सर्वोच्च स्थान दिया तथा इसके लिए हर सम्भव प्रयत्न किये। दयानंद का प्रादुर्भाव भारत भूमि पर एक ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति बहुत दुर्बल थी और उनको हर प्रकार के अधिकारों से वंचित रखा जाता था। दयानंद ने उस दौर में महिला उत्पीड़न के विरूद्व भारतीय समाज में व्याप्त कुरूतियों का खुल कर विरोध किया और उन्हें भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, और आध्यात्मिक क्षेत्र में पुरूषों के समान अधिकारी माना। दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित संगठन 'आर्य समाज' ने महिला उत्थान को एक आवश्यक कार्य के रूप में स्थापित करने का प्रयत्न किया जो वर्तमान समय में भी महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र के लिए कार्यरत है। भले ही वर्तमान समय में महिला सुरक्षा और उनके अधिकारो के सम्बन्ध में पहले से व्यापक सुधार हुए हैं, किन्तु आज भी भारत के अधिकांश क्षेत्रो में महिलाओं के साथ असमान व्यवहार किया जाता है और उन्हें पुरूषो से कम आंका जाता है। आज यह अति आवश्यक हो गया है कि हम हर क्षेत्र में महिलाओं को पुरूषो के समान अधिकारी मानें ताकि महिला और पुरूष का भेद खत्म हो सके। वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण के लिए परिवर्तन का संघर्ष काल चल रहा है और समय परिवर्तन के साथ नई समस्याओं का भी जन्म हुआ है, अतः अब समय आ गया है कि वर्तमान समय में नारी की समस्याओं की पहचान कर समाज के बुद्धिजीवी, सामाजिक संस्थाए और चिन्तक इस समस्या का समाधान करें और महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों में पूर्ण रूप से सशक्त बनाया जाएं, ताकि महिला सशक्तिकरण की सार्थकता सिद्व हो सके।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ–

महिला सशक्तिकरण का अर्थ है, महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, एवं धार्मिक आदि क्षेत्रों में इस प्रकार सशक्त किया जाएं कि वे स्वयं के फैसले लेने के लिए स्वतन्त्र हो और महिलाओं को उनके अधिकार एवं कर्तव्यों का उपयोग करने का पूर्ण अधिकार प्रदान किया जाएं, ताकि महिला एवं पुरूष के बीच की खाई को दूर कर दोनो को एक समान की दृष्टि से देखा जा सके। यदि हमें सही अर्थों में महिलाओं को सशक्त करना है तो उन्हें अपने अनुसार जीवन जीने व स्वविवेक से कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए और इस स्वतंत्रता पर कोई प्रतिबंध नही होना चाहिए तभी महिला सशक्तिकरण का प्रयास सार्थक हो सकता है। यदि हम साधारण तौर पर देखें तो महिला सशक्तिकरण का अर्थ है कि महिलाओं को अपनी जिन्दगी का फैसला करने की पूरी आजादी देना या उनमें ऐसी क्षमताओं को विकसित करना, जिससे वे समाज में अपनी सही स्थिति प्राप्त कर सके।

संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार महिला सशक्तिकरण के सम्बन्ध में मुख्य बिन्दु निम्नलिखित है।

- महिलाओं में आत्म–मूल्य की भावना जागृत करना।
- महिलाओं को उनके निर्णय लेने की आजादी देना और उन्हें उनके अधिकारों से अवगत कराना।
- महिलाओं को हर क्षेत्र में पुरूषों के समान अधिकार दिलाना और संविधान में एक समान जगह बनाना।
- घर हो या बाहर महिलाओं को अपने मनचाहे तरीके से काम करने की आजादी प्रदान करना।
- सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को आगे बढ़ाने के लिए महिलाओं की भूमिका को और अधिक बढ़ाना।[1]

भारतीय समाज एवं महिला–

किसी भी समाज का निर्माण बिना स्त्री और पुरूष के सहयोग से पूर्ण नही होता है। जहां एक ओर समाज के विकास में पुरूषों की भूमिका जितनी महत्व रखती है, वहीं दूसरी ओर आज स्त्रियां भी विभिन्न क्षेत्रो में अपनी भूमिका का निर्वहन कर समाज में अपना योगदान दे रही है। वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति पुरूषों के समान होती थी। उन्हें पुरूष की सहधर्मिणी माना जाता था और यह मान्यता थी कि बिना स्त्री के पुरूष का कोई भी यज्ञ व धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं हो सकता है। स्त्रियों को पुरूष के समान ही विद्या गृहण करने का अधिकार प्राप्त था साथ ही वे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक जीवन में पुरूष की सहयोगी होती थी, किन्तु कालान्तर में स्त्रियों की स्थिति हीन हो गयी और उनका जीवन एक सीमित दायरे तक ही रह गया। मध्यकाल में भी स्त्रियों की दशा में कोई उन्नति नहीं हो पायी और उनका जीवन परदे और घर की चार दीवारी तक ही सीमित हो गया। भारत में उन्नीसवीं सदी में महिला सशक्तिकरण विमर्श का विषय बना और आज भी बना हुआ है।[2]

ईश्वर ने इस संसार में मानव के दो रूप दिए हैं जिसमें एक पुरूष तो दूसरा नारी का है। पुरूष और नारी दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं किन्तु नारी के बिना इस संसार के अस्थित्व की कल्पना नहीं की जा सकती है। ईश्वर ने नारी के शारिरिक रचना ही इस प्रकार से की है कि संसार के भविष्य की वह स्वयं निर्मात्री बन गयी। संसार में अनेक ऐसे युग–पुरूष हुए हैं जिनकी महानता के पीछे किसी न किसी रूप में नारी का साथ अवश्य रहा है। अतः कहा जा सकता है कि युग चाहे जो भी रहा हो इस संसार की तरक्की की कल्पना नारी के विकास पर ही आधारित है। राजा मनु ने 'मनु स्मृति' में नारी के महत्व पर लिखा है कि– **"यत्र नारियस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता "**। अर्थात जहॉ नारी की पूजा होती है वहॉ देवता निवास करते है। निश्चित ही प्राचीन समय में नारियों का व्यक्तित्व सुरक्षित था और वे जीवन के महत्तपूर्ण फैसले स्वयं ले सकती थी।[3]

उत्तर वैदिक काल (600 ई0 पू0–300 ई0) में महिलाओं की स्थिति में कुछ ह्रास होने लगा। इसी काल में महिलाओं की वेद पाठ और यज्ञ करने की परम्परा को प्रतिबन्धित किया गया, साथ ही विधवा पुनर्विवाह को निषेध कर बाल विवाह की प्रथा का आरम्भ हुआ। इसके पश्चात भी महिलाओं की स्थिति अत्यधिक शोचनीय नहीं थी। धर्मशास्त्र युग– (300 ई0–11 वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध तक) इस युग में महिलाओं की स्थिति में पतन का आरम्भ स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। महिला शिक्षा पर प्रतिबन्ध, बाल विवाह पर बल, विवाह में कन्या की स्वीकृति का अन्त, पुरूष का नारी पर पूर्ण नियंत्रण, विधवा पुनर्विवाह पर पूर्ण प्रतिबंध के साथ सती प्रथा जैसी कुरीतियां प्रचलित हुई। मध्य काल में महिलाओं की स्थिति और अधिक दयनीय हो गयी। इस काल में मुख्य रूप से महिलाओं की आर्थिक पराधीनता, कुलीन विवाह प्रथा, अन्तर्विवाह, बाल विवाह, अशिक्षा और संयुक्त परिवार प्रणाली आदि ऐसी स्थितियां व्याप्त हुई, जिसने महिलाओं के अधिकारों का पूर्ण हनन किया और उनकी स्थिति एक वस्तु के समान हो गयी।[4]

महिला सशक्तिकरण का विषय हजारों वर्षों से एक चर्चित विषय बना हुआ है। जब–जब सामाजिक उत्थान एवं सामाजिक चेतना के विषय पर विमर्श होता है तब–तब महिला उत्थान का जिक्र अवश्य होता है। प्राचीन भारतीय धर्म के साथ–साथ उन्नीसवीं सदी के भारतीय समाज की दशा भी अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी और वर्णव्यवस्था के नाम पर जात–पात, ऊॅच–नीच और छूत–अछूत के विचार भारतीय समाज की एक विशेषता बन गयी थी। आचार–विचार, खान–पान और रहन–सहन के सम्बन्ध में प्रत्येक जाति के अपने पृथक–पृथक नियम थे, जिनका अतिक्रमण कर समाज के लिए एक नियम पर आधारित व्यवस्था का संचालन करना किसी के

वस में नही था। साथ ही स्त्रियों की दशा भारतीय समाज में एक और शोचनीय विषय था। हिन्दुओं में स्त्रियों को विद्या का अध्ययन करना शुभ नहीं माना जाता था। स्त्रियों के वेद अध्ययन की परम्परा तो चिरकाल में समाप्त कर दी गयी थी, बहुत कम अपवादों को छोड़कर स्त्रियों को शिक्षा के अधिकार से वंचित ही रखा जाता था। उच्च जाति की स्त्रियों का दायरा घर की चार दीवारी तक ही सीमित था और छोटी जातियों की स्त्रियां पुरूषों के समान ही मजदूरी करती थी। जाति–पाति का यह रोग हिन्दुओं के साथ–साथ मुसलमानो में भी विद्यमान था।[5]

परदे की प्रथा सम्पूर्ण उत्तर भारत में प्रचलित थी । भले ही दक्षिण में भी इस प्रथा का प्रभाव नहीं था। भारत में इस प्रथा की जड़े कब विकसित हुई यह एक विवाद का विषय है। किन्तु यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि विदेशी और विधर्मी जातियों के आक्रमण के समय इस प्रथा का विशेष रूप से विकास हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के कालखण्ड में बाल्यकाल में ही कन्याओं का विवाह किया जाता था। बाल विवाह की प्रथा सम्पूर्ण भारत की एक कुप्रथा बनकर आगे बढ़ रही थी। विधवा पुनर्विवाह हिन्दू धर्म में पाप माना जाता था जिस कारण यह निषिद्ध था। बाल विवाह के प्रचलन के कारण अनेको कन्याएं बचपन में ही विधवाएं हो जाती थी और उन्हें सम्पूर्ण जीवन विवश एवं लाचार होकर जीना पड़ता था। हिन्दू धर्म की अनेक महिलाएं इस्लाम एवं ईसाई धर्म को अपना लेती थी, क्योंकि इन धर्मो में विधवा विवाह कर सकती थी। सती प्रथा इस काल में एक प्रमुख प्रथा थी। पति के मर जाने पर पत्नी को भी चिता में जलना होता था जिस प्रथा को सती प्रथा कहा जाता था।[6]

दयानंद सरस्वती के कार्य क्षेत्र में आने से पूर्व ही हिन्दू समाज में यह विचार विद्यमान था कि स्त्री एवं पुरूष में असमानताए है, प्रकृति ने शरीर एवं स्वभाव से स्त्री को भिन्नता प्रदान की है। जिस भिन्नता के कारण पुरूष श्रेष्ठ एवं स्त्री निम्न है। समाज की इस विचारधारा ने पुरूष को श्रेष्ठता प्रदान की और स्त्री को उसके सम्मान से वंचित कर दिया, जिस कारण समाज में स्त्रियों का सम्मान गिरता गया। सभ्य एवं सम्मानित परिवारों की स्त्रियां भी घर की चार दीवारी तक ही सीमित रह गयी उन्हें घर से बाहर निकलना दुःसाध्य हो गया, जिस कारण स्त्री जाति को शिक्षा के अधिकार से भी वंचित कर पर्दे की घुटन तक ही सीमित कर दिया गया। स्त्रियों के सामाजिक जीवन पर भी अनेक प्रकार से प्रतिबन्ध लगाये गये जिस कारण उनका विकास का मार्ग स्वयं ही अवरूद्ध हो गया।[7]

दयानंद के चिंतन में महिला सशक्तिकरण–

भारतीय समाज में जब नारी अपमान व संकट के घोर वातावरण में जीने के लिए मजबूर थी तब दयानंद ने भारतवर्ष में क्रान्ति का उद्घोष किया। दयानंद ने समाज में नारी की स्थिति का परीक्षण कर इस देश के पतन का कारण वास्तव में यहां की नारी का अपमान माना। अतः नारी उत्थान के लिए उन्होंने सर्वप्रथम नारी शिक्षा व वेद पाठ का आवश्यक अधिकार पुनः दिलाया। नारी को सशक्त करने के लिए दयानंद ने नारी के लिए समाज के दृष्टिकोण के विरूद्ध बहुविवाह, बालविवाह, सती प्रथा आदि का घोर विरोध करते हुए विधवा विवाह को प्रोत्साहन दिया।[8]

महिला सशक्तिकरण समकालीन भारतीय जीवन का एक लोकप्रिय विषय है। साथ ही यह वर्तमान नारी की अस्मिता एवं पहचान का भी एक विमर्श बन चुका है। जहां एक ओर यह विषय नारी सशक्तिकरण से तो दूसरी ओर समाज के सशक्तिकरण से भी जुड़ा है। प्राचीन इतिहास से वर्तमान भारत का अवलोकन करने से यह पता चलता है कि जिस समाज की स्त्री सशक्त न हो वह समाज कैसे सशक्त हो सकता है। स्त्री–मुक्ति, स्त्री–नियति और स्त्री चेतना के साथ ही हमें इनके उत्थान के लिए आवश्यक प्रश्नों के उत्तर भारतीय सामाजिक संरचना, सामाजिक परिवेश एवं सामाजिक स्थिति के भीतर ही खोजने होंगे। उन्नीसवीं सदी में भारतीय पुनर्जागरण के आरम्भ से ही महिला उत्थान को लेकर चिंतन और मंथन शुरू हो गया था। भारतीय पुनर्जागरण के आंदोलन में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन एवं नारी उत्थान के सम्बन्ध में प्रश्न बनाकर साक्षात्कार का सर्वप्रथम श्रेय यदि किसी समाज सुधारक को जाता है तो वे दयानंद सरस्वती थे, जिन्होंने अपने समाज सुधार कार्यक्रमों के अन्तर्गत महिलाओं को सशक्त करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न किये।[9]

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारत भूमि के राष्ट्रीय क्षितिज पर जब दयानंद का आविर्भाव हुआ तब एक ओर औपनिवेशिक शासन की सभ्यता का अपमानजनक षड्यंत्र चल रहा था तो दूसरी ओर भारतीय नारी

अपनी वर्तमान अधोगति से गुजर रही थी। जहां एक ओर सामाजिक कुरीतियां अपने चरम पर थी वहीं दूसरी ओर कुलीन वर्ग। साथ ही कुछ क्षेत्रो में चले रहे समाज सुधार आन्दोलनों की गति बहुत धीमी थी, जिस कारण भारतीय समाज में अंधकार और निराशावाद का वातावरण विद्यमान था। इतिहास के ऐसे बुरे संक्रमणकालीन दौर में अंधकार से मुक्ति और नारी उत्थान, सामाजिक सत्य, राष्ट्रीय सत्य और सबसे ऊपर मानवीय सत्य की खोज दयांनद सरस्वती ने की। दयानंद ने वास्तविक सत्य की खोज के लिए वैदिक युगीन प्रणाली को 'रोल मॉडल' बनाकर भारतवर्ष और मानव जाति को प्रकाशित करने का अद्भुद कार्य किया। प्रकाशमान और सत्योपोषक दयानंद वास्तविक अर्थों में भारतीय समाजसुधार के सूर्य थे। पुनर्जागरण के प्रकाश पुंज में राष्ट्र और समाज को नारी की पतितावस्था और दिशाहीनता के अंधकार से निकालकर सत् मार्ग पर अग्रसर करते हुए आधुनिक भारत के निर्माण का मार्ग प्रसस्त कर दयानंद ने नारी उत्थान के लिए एक क्रान्तिकारी युगप्रवर्तक की भूमिका का निर्वाह किया।[10]

स्त्री शिक्षा के सन्दर्भ में दयानंद का दृष्टिकोण–

शिक्षा के प्रकाश के बिना किसी भी समाज का अन्धकार दूर नही किया जा सकता है। नारी का शिक्षित होना एक शिक्षित समाज के विकास का अभिन्न अंग है। स्त्री शिक्षा पर बल देना दयानंद की शिक्षा विषयक मान्यताओं की एक प्रमुख विशिष्टता रही है। जीवन–रूपी रथ के स्त्री और पुरूष दोनों एक समान पहिए है, इसलिए स्त्री को शिक्षा के प्रकाश से वंचित रखना जीवन के संतुलित विकास में व्यवधान उत्पन्न करता है। दयानंद ने अपने शिक्षा के पाठ्यक्रम में बालिकाओं के लिए कुछ ऐसे विषयों का समावेश किया है जो उन्हें आदर्श नारी के साथ ही आदर्श ग्रहणी और आदर्श माता बनने में उपयोगी सिद्ध होती है।[11]

दयानंद का कृतित्व और व्यक्तित्व बहुआयामी था। उनके शिक्षा परक सिद्वान्तों का आधार वेदों और अन्य धर्मशास्त्रों में वर्णित शिक्षा विषयक मन्तव्यों पर आधारित है। दयानंद के प्रादुर्भाव से पूर्व भारत में शिक्षा व्यवस्था संतोषप्रद नहीं थी और महिला शिक्षा की राह तो मीलों कोष दूर तक प्रतीत नही होती थी। जिस कारण भारत का समाज अशिक्षित और भारतीय नारी के शिक्षा के प्रकाश से वंचित होने के कारण नारी उत्थान की मात्र कल्पना ही की जा सकती थी। दयानंद ने तब भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों और विसंगतियों के निराकरण के लिए महिला शिक्षा को नितान्त आवश्यक माना और इसके लिए भरपूर प्रयास किये। उन्होंने पुरूषों के साथ–साथ महिलाओं को भी हर प्रकार की शिक्षा के साथ ही वैदिक शिक्षा का भी अधिकारी माना और यह विचार दिया कि भारतीय नारी शिक्षा के प्रकाश द्वारा समाज में सशक्त होकर राष्ट्र के विकास में समर्थ सिद्व होगी।[12] शिक्षा के सन्दर्भ में दयानंद की संन्तुष्टि थी कि समाज के हर वर्ण के बालक और बालिकाओं को विद्या ग्रहण करनी चाहिए क्योंकि यह अधिकार सभी को है। शिक्षा के अधिकार के बिना हम किसी भी प्रकार के अन्धकार को दूर नही कर सकते अतः पुरूष और नारी शिक्षा को अपना अनिवार्य अधिकार समझकर ग्रहण करें।[13]

दयानंद तात्कालिक भारतीय समाज में स्त्रियों की इस स्थिति से अत्यधिक दुखी एवं व्यथित थे। उन्होंने समाज में प्रचलित स्त्री प्रगति में बाधक मान्यताओं का खण्डन किया और स्त्रियों को भी विद्याग्रहण करने का पुरूषों के समान समर्थन किया। दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में लिखा है कि–''सब स्त्री एवं पुरूष अर्थात मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुए में पड़े रहो और यह श्रृति तुम्हारी कपोलकल्पना से हुई है, किसी प्रामाणिक ग्रन्थ की नहीं है और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने–सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के छब्बीसवें अध्याय का दूसरा मंत्र है–

''यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनैभ्यः ब्रह्मराजन्याभया शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च '' ।।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्यः) सब मनुष्यों के लिए (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति का सुख देनेवाली (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का उपदेश करता हूँ, वैसे तुम भी करो। यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि 'जन' शब्द से द्विजों को ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को ही वेदों के पढ़ने का अधिकार लिखा है, स्त्री और शुद्रादि वर्णों का नहीं। तो (ब्रह्मराजन्याभयास्) इत्यादि वेदमन्त्र को देखों, वहां परमेश्वर स्वयं कहता है, कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य,

शूद्र और अपने भृत्य या स्त्री आदि (अरणाय) और अतिशूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है, अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़–पढ़ा और सुन–सुनाकर विज्ञान को बढ़ाके अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों का त्याग करके दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त हों''।[14]

दयानंद सरस्वती से पूर्व जितने भी आर्चाय हुए उन सभी ने स्त्रियों की परतंत्रता का समर्थन किया। स्त्री जाति की जितनी निन्दा वेदान्त के आचार्यों ने की है, कदाचित ही उतनी किसी अन्य ने की हो। परन्तु दयानंद सरस्वती एवं आर्य समाजियों के हृदय में स्त्री जाति के लिए अत्यधिक सम्मान था। आर्य समाज ने सदैव ही स्त्रियों के उद्धार का समर्थन किया है और वर्तमान समय में भी स्त्री सशक्तिकरण के लिए कार्य करता आ रहा है, स्वयं दयानंद सरस्वती ने कभी स्त्रियों की आलोचना नहीं की। उन्होंने स्त्रियों के गौरव एवं सम्मान को बढ़ाने का अत्यधिक समर्थन किया और हर मोर्चे पर स्त्री समानता के लिए प्रयत्न किये। दयानंद ने शिक्षा और समानता के आधार पर स्त्री सशक्तिकरण की परिकल्पना को आगे बढ़ाने का जो कार्य किया आर्य समाज आज भी इस पवित्र कार्य में संलग्न है, ताकि हमारे देश में स्त्री एवं पुरूष के भेद को दूर किया जा सके।[15]

आर्य समाज स्त्री जाति के उत्थान के लिए अपनी स्थापना के समय से ही दृढ़ प्रतिबद्ध था। पुनर्जागरण के प्रकाश में भारतीय समाज में स्त्री को पतितावस्था और दिशाहीनता के अंधकार से निकालकर सत् मार्ग पर अग्रसर करते हुए आधुनिक भारत के निर्माण में मार्गदर्शक बनकर दयानंद ने भारतीय इतिहास का क्रान्तिकारी कार्य किया। दयानंद एक व्यक्ति तक ही सीमित नहीं थे, बल्कि वे एक संस्था, एक सोच थे। दयानंद के नेतृत्व में आर्य समाज ने स्त्री के अपहृत अधिकारों की वापसी के लिए उनकी शोचनीय स्थिति को वैदिक आधार पर समानता की दुहाई देनी पड़ी। स्त्रियों को दुर्दशा, निरक्षरता एवं अज्ञानता के दलदल से निकालने के लिए वे प्राचीन भारत के वैदिक युग के आधार पर नारी का अवलंबन करते है। वैदिक काल के समाज में नारी को पुरूषों के समान ही सभी अधिकार प्राप्त थे। दयानंद का सर्वत्र यह प्रयास था कि भारतीय नारी समग्र गुणों से विभूषित श्रेष्ठ नारी है, अतः उसके अधिकारो का हनन न किया जाएं, इसलिए दयानंद ने स्त्री शिक्षा के लिए गुणात्मक परिवर्तन किये। दयानंद उन्नीसवीं सदी के प्रथम शिक्षा विद् एवं स्त्री सुधारक थे जिन्होंने स्त्री को मानवता का आधा हिस्सा समझकर स्त्री शिक्षा को जन्मसिद्ध अधिकार प्रदान किये।[16]

वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में दयानंद की प्रासंगिकता–

किसी भी व्यक्ति एवं विचार की प्रासंगिकता की कसौटी वर्तमान युग की समस्याओं और चुनौतियों पर आधारित होता है। वर्तमान समय में हम महिला सशक्तिकरण की चुनौतियों से निपटने के लिए कितने तैयार है यह हमारी समाज की विचारधारा पर निर्भर है। महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में जो अंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देकर एवं शिक्षा के प्रकाश द्वारा जात–पात की दीवारों को तोड़कर मानवीय समाज के बदलाव द्वारा नव भारत की जो कल्पना दयानंद ने की थी लगता है आज वह स्वप्न अधूरा ही रह गया है, अभी उसकी मंजिल बहुत दूर है। हमारे देश में न तो सविधान की कमी है और न ही कानून की, कमी है तो सिर्फ मानसिकता की, जब तक हमारी मानसिक संरचना नही बदलेगी तब तक हम सामाजिक संरचना भी नहीं बदल सकते है। ऐसा नहीं है कि जाति के प्रति दृष्टिकोण नहीं बदला जा सकता और स्त्री के प्रति बदल जाए, क्योंकि इस दोनों दृष्टिकोणों का जन्म सामंतवाद की कोख से उत्पन्न हुआ है। दयानंद की वैचारिक सैद्वांतिकी जाति और स्त्री की संरचना, परिवेश और स्थिति से टकराकर निर्मित होती है। उन्होंने जन्म एवं जाति से बढ़कर गुण एवं कर्म प्रधान व्यवस्था को सर्वत्र महत्व देकर समाज में एक नया ढ़ांचा बनाने का प्रयत्न किया।[17]

दयानंद की महिला सशक्तिकरण के सम्बन्ध में महिला सम्बन्धी धारणा और मानसिकता को बदलता है। वे महिला को एक स्वतंत्र मानव अस्तित्व के रूप में ग्रहण करते हुए उनकी गरिमा का सम्मान कर उसे पुरूषों के समान ही व्यक्तित्व के प्रस्फुटन का रचनात्मक अवसर प्रदान करते है। महिला सशक्तिकरण के लिए उनकी दृष्टि में पहले सामाजिक व्यवस्था एवं परिवेश को इसके अनुकूल बनाना होगा तभी यह सामाजिक धारणा में बदलाव आयेगा और हमें भी इस व्यवस्था में सकारात्मक बदलाव लाना होगा। दयानंद ने इस बात पर बल दिया कि सामाजिक व्यवस्था का ताना–बाना बनते हुए महिलाओं के लिए समान अवसर, समान वातावरण, समान नियम, समान अधिकार, एवं समान स्वतंत्रता का वातावरण तैयार करना होगा। इसी समानता और मानवता के परिवेश में ही महिला सशक्तिकरण की सार्थकता सिद्ध हो सकती है। जब वर्तमान समाज के साथ–साथ हमारी

विचारधारा और मानसिकता में परिवर्तन होगा तो नारी की स्थिति में अवश्य उत्थान होगा, क्योंकि दृश्य एवं दृष्टि परस्परता में बदलते है।[18]

दयानंद की दृष्टि में महिला शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। वर्तमान भारत में आज भी महिला शिक्षा के समक्ष अनेक कठिनाइयॉ विद्यमान है। दयानंद की दृष्टि में स्त्री ही अज्ञानता एंव अविद्या का नाश करने के समर्थ है वे लिखते हैं कि–जैसे उषावेला दिन को उत्पन्न करके सबको जगाती है, वैसे ही विदुषी स्त्री अपनी सन्तानों को अविद्यारूपी निद्रा से जगाकर विद्या के ज्ञान रूपी प्रकाश का बोध कराती है। दयानंद उन सन्तानो को सौभाग्यशाली मानते हैं जिनकी माता प्रशस्तगुणशालिनी हैं। उनकी दृष्टि में शिक्षा का मन्तब्य केवल ज्ञान प्राप्ति से नहीं है, बल्कि समस्त विश्व में हित, शान्ति, सौहार्द एवं कल्याण का मूल कारण मानव निर्माण को मानते हैं, इस कार्य के लिए आवश्यक है कि स्त्री एवं पुरूष दोनो में विवेक, विद्धता एवं त्यागादि उत्तम गुण विद्यमान हों। मनुष्यों में इन मानवीय मूल्यों के लिए गर्भ से लेकर बाल्यकाल में माता द्वारा दिये गये संस्कार बीजरूप में कार्य करते हैं, इसलिए संसार के कल्याण के लिए एक शिक्षित माता का महत्व सर्वोत्तम होता है।[19]

दयानंद की महिला सशक्तिकरण की विचारधारा केवल नारी–चिंतन या नारी पर आधारित प्रश्नों तक ही सीमित नही है, बल्कि उनके द्वारा स्थापित संगठन 'आर्य समाज' के माध्यम से एक आन्दोलन खड़ा करते हुए उसे एक रचनात्मक परिणति प्रदान करते है, जो आज भी नारी सशक्तिकरण के लिए कार्यरत है। उनके महिला चिंतन में वैचारिकता से कहीं अधिक सृजनात्मकता है। इस सृजनात्मकता के कारण ही उनकी मूल्यता एवं सार्थकता सिद्ध होती है क्योंकि मूल्यता और सार्थकता की आवश्यकता हर युग में होती है। वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण की दिशाहीनता की स्थिति एवं चुनौतियों के दौर में एक मार्गनिर्देशक के रूप में दयानंद के महिला विमर्श की आवश्यकता कल से कई अधिक आज है। यदि महिला उत्थान के सन्दर्भ में इन विचारों को आत्मसाध किया जाए तो सभी सामाजिक, नैतिक, आर्थिक, वैधानिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, जातिवादी कलह और सामाजिक असमानता को दूर किया जा सकता है। आज भारतीय समाज में इस प्रकार के आधुनिक प्रकाश और सत्य की आवश्यकता है जो नारी को वास्तव में सशक्त कर सके। इतिहास के अतीत में दयानंद के महिला विमर्श की जो भूमिका थी वर्तमान में महिला सशक्तिकरण की उस भूमिका को इतिहास के बोध के साथ आज वर्तमान समय की आवश्यकता के अनुरूप विस्तार किया जा सकता है। इस बात की गुंजाइश स्वयं दयानंद ने अपने महिला सशक्तिकरण के सन्दर्भ में प्रस्तावित की थी।[20]

वर्तमान समय आधुनिकता और विकास की नई प्रगति का समय है। जहां एक ओर मानव ज्ञान–विज्ञान की अभूतपूर्व प्रगति के साथ नये–नये आविष्कार कर रहा है, वही दूसरी ओर महिला सशक्तिकरण के लिए एक लम्बे समय से विचार–विमर्श किया जाता रहा है। महिलाओं को जब तक सामाजिक, आर्थिक, राजनौतिक एवं अन्य अधिकारो में पुरूष के समान अधिकारी नहीं माना जायेगा तब तक न तो महिलाओं का उत्थान सम्भव है और न ही देश का, क्योंकि किसी भी देश का विकास उस देश की संकीर्ण भावना के अन्त के बिना नही हो सकता है। भारतीय समाज में भले ही महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में कुछ व्यापक परिवर्तन अवश्य हुए हैं किन्तु आज भी बहुत बड़े तबके में महिलाओं को शिक्षा जैसे अधिकार से बंचित रखा जाता है और उन्हें सिर्फ घर के कार्य के लिए उपयोग किया जाता है। क्या अब यह समय नहीं आ गया हैं कि महिलाओं को भी पूर्ण आर्थिक अधिकार दिये जाये और सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में उनका दायरा बड़ाकर अनिवार्य रूप से 50 प्रतिशत किया जाना चाहिए, जिससे वास्तव में महिलाओं का उत्थान सम्भव हो सके। दयानंद ने अपने समाज सुधार कार्यक्रमो के अन्तर्गत महिला सशक्तिकरण की क्रन्ति को जन्म दिया और इसके तहत इस रहस्य को उद्घोषित किया कि शिक्षा के बिना मानव अधूरा है। नारी भी जब तक शिक्षित नहीं होगी तब तक वह जागरूक नही हो सकती है, जिससे वह न ही अपने अस्थित्व और न ही अपने महत्व को समझ सकती है। दयानंद ने महिला सशक्तिकरण के लिए जिस वैचारिक एवं सामाजिक क्रान्ति का प्रादुर्भाव किया था उनके इस मिशन को आर्य समाज ने आगे बढ़ाते हुए अनेक कन्या गुरूकुलों एवं कन्या पाठशालाओं की स्थापना कर स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया, जिसके सकारात्मक परिणाम आज हमारे सम्मुख आ रहे है।

महिला सशक्तिकरण के जो बीज दयानंद ने अंकुरित किये थे वे आज भी पूर्ण रूप से प्रज्ज्वलित नही हुए है। उन्होंने शिक्षा और नैतिकता के आधार पर महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता को महसूस किया था और समाज में महिलाओं के प्रति संकीर्ण एवं विकृत मानसिकता का विरोध कर एक नयी सकारात्मक सोच

विकसित करने की पद्धति पर बल दिया था। क्योंकि जब तक हम अपनी मानसिकता में परिवर्तन नही करेंगे तब तक महिला सशक्तिकरण एक विमर्श का ही विषय बना रहेगा। दयानंद द्वारा प्रतिपादित नारी सशक्तिकरण की अभिलाषा को साकार करने में आर्य समाज प्रयत्नरत अवश्य है, किन्तु पूर्ण रूप से इस कार्य को साकार नहीं कर पाया है, जिसका एक प्रमुख कारण दयानंद सरस्वती की मृत्यु के पश्चात उनके जैसे नेतृत्वकर्ता का भी अभाव रहा है। दयानंद महिला सशक्तिकरण एवं उनके अधिकारों के सदैव हितैसी रहें, उनका कार्य एवं चिंतन के अध्ययन से पता चलता है कि उन्होंने कभी भी महिलाओं को पुरूषों से कम नहीं माना। वास्तव में हमें सही अर्थों में महिला सशक्तिकरण को सार्थक करना है तो इस सन्दर्भ में दयानंद सरस्वती के विचारों, सिद्वान्तों और उनके द्वारा प्रतिपादित शिक्षा का अनुकरण कर महिलाओं को पारिवारिक समानता, सामाजिक सुरक्षा और आर्थिक आधार पर सशक्त करना होगा ताकि महिला सशक्तिकरण का पावन कार्य सम्भव हो सके। नारी सशक्तिकरण के लिए उनके द्वारा किये गये कार्य और नारी शिक्षा व नारी की समृद्धि के लिए दयानंद सरस्वती का योगदान वर्तमान एवं भविष्य के लिए सदैव प्रेरणादायक रहेगा। इस सन्दर्भ में आचार्य विनोबा भावे ने ठीक ही कहा हैं कि, ''मैं जब किसी पिता को अपनी पुत्री की उंगली पकड़े विद्यालय ले जाते हुए देखता हूँ, तो लगता है मानो उंगली पकड़े दयानंद आ रहा है''।

सन्दर्भ सूची–

1. https://oyehero.com।
2. विद्यालंकार, सत्यकेतु, एवं वेदालंकार, हरिदत्त, आर्य समाज का इतिहास, प्रथम भाग, आर्य स्वाध्याय केन्द्र, दिल्ली, 2014, पृष्ठ–458
3. मिश्रा, मंजू, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, एशियन आफॅसेट प्रिंटर्स, दिल्ली, 2012, पृष्ठ–208
4. अग्रवाल, अमित, भारतीय सामाजिक समस्याएं, विवेक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010, पृष्ठ–171
5. विद्यालंकार, सत्यकेतु, एवं वेदालंकार, हरिदत्त, उपरोक्त, पृष्ठ 155–156
6. विद्यालंकार, सत्यकेतु, एवं वेदालंकार, हरिदत्त, उपरोक्त, पृष्ठ 157
7. शर्मा, वीरेन्द्र, आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारधाराएँ, श्री पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ 124
8. नारी संसार, नारी जागरण और महर्षि दयानंद, साप्ताहिक आर्य संदेश का लेख, 6 फरवरी 2005, पृष्ठ 4
9. शर्मा, मीना, महर्षि दयानंद सरस्वती और स्त्री विमर्श, आर्य प्रकाशन मंडल, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2010, पृष्ठ 9
10. शर्मा, मीना, उपरोक्त, पृष्ठ 92–93
11. भारतीय, लाल भवानी, महर्षि दयानंद का स्वराज्य चिंतन, सत्यधर्म प्रकाशन जयपुर, राजस्थान, द्वितीय संस्करण, 2000, पृष्ठ 52
12. भारतीय, लाल भवानी, स्वामी दयानन्द सरस्वती : व्यक्तित्व एवं विचार, सत्यधर्म प्रकाशन, जयपुर, राजस्थान, 1967, पृष्ठ 44
13. लाजपतराय, लाला, युग–प्रवर्तक स्वामी दयानंद, आर्य प्रकाशन मंडल, गांधीनगर, दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 69
14. सरस्वती, दयानंद, सत्यार्थ प्रकाश, भगवती प्रकाशक, दिल्ली, संस्करण 1994, पृष्ठ 58–59
15. सिंह, कुमार मनोज, एवं चौधरी, कुमार शैलेश, भारतीय राजनीतिक चिन्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती, डिस्कबरी पब्लिशिंग हाउस प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008, पृष्ठ 111
16. शर्मा, मीना, उपरोक्त, पृष्ठ 93–94
17. शर्मा, मीना, उपरोक्त, पृष्ठ 105–106
18. शर्मा, मीना, उपरोक्त, पृष्ठ 109
19. लक्ष्मी, विजय, महर्षि दयानंद की राष्ट्र को देन, एक्सल कम्प्यूटर्ज एंड प्रिंटर्स, अमृतसर, 2010, पृष्ठ 188–189
20. शर्मा, मीना, उपरोक्त, 2010, पृष्ठ 111

दीपक चन्द्र
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, हे0 न0 ब0 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल,उत्तराखण्ड।

LBP PUBLICATION